Indian Streams Research Journal ORIGNAL ARTICLE ISSN:-2230-7850

राग हंस ध्वनि की बंदिशों का विश्लेषणात्मक अध्ययन और सुझाव

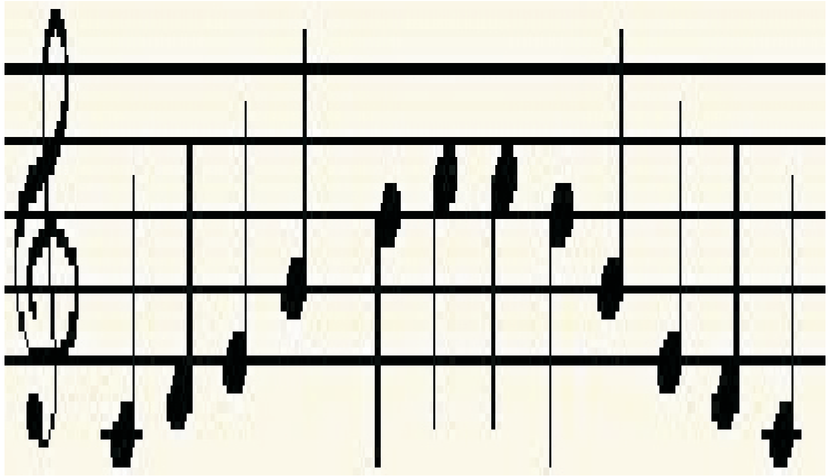

अवधेश प्रताप सिंह तोमर

सहा. प्राध्यापक , संगीत विभाग , डॉ. हरि सिंह गौर विश्वविद्यालय , सागर म.प्र.
निवास–गोपाल संगीत महाविद्यालय , महावीर चौक , बीना (म.प्र.)

सारांश :- भारतीय राग गायन पद्धति में कई राग ऐसे है जो प्राचीन ग्रंथो में वर्णित नहीं है उनमें से एक राग है जो कर्नाटक संगीत में अधिक प्रचलित है और उत्तर भारतीय गायन वादन में आधुनिक युग में प्रचार में आया वह राग हैं हंसध्वनि ।

प्रस्तावना :

राग की प्रसिद्धि का अनुमान इस विंदु से लगाया जा सकता है कि इसका उल्लेख पं. भातखंडे ने श्री मल्लक्ष्यसंगीतम् के प्रथम संस्करण में इसे सम्मिलत तो किया परंतु द्वितीय संस्करण में नहीं किया।[1]

हंसध्वन्याह्वयो रागः स्यात् शुद्ध स्वर मेलनात्।
आरोहेऽप्यवरोहे च मधहीनो भवेत्सदा।।74।।
स्वरः षड्जो मतोवादी कैश्चिद्गांधार को ह्यसौ।
गानमस्य समादिष्टं रात्रयां प्रथमयामके।।75।।[2]

यह राग विलावल थाट से उत्पन्न माना गया है जिसके धर्म के अनुसार यह शुद्ध स्वर से युक्त है। इसें मध्यम और धैवत वर्जित होने से यह औडव जाति का राग है। रात्रि प्रथम का होने के कारण यह आधुनिक काल की महफिलों, कार्यक्रमों में प्रस्तुत किया जाता है।

हंसध्वनी की बंदिशों का विश्लेषण करने से पूर्व हमें यह जानना आवश्यक है कि बंदिशे बनाने का आधार और उनके स्वरूप को प्रभावित करने वाले वे कौन से तत्व है जो एक रचनाकार को ध्यान में रखना चाहिए और अभी तक के रचनाकारों को प्रभावित करते आए है। वंदिश शब्द पारसी भाषा का जिसका अर्थ है " बांधने की क्रिया का भाव"। वह सागीतिक रचना जो शब्द और ताल से बंधी हो बंदिश कहलाती है।[3]

एक आदर्श बंदिश के निर्माण में निम्न तथ्यों को ध्यान में रखा जाता है :–

(1) बंदिश का चलन राग की चंचलता या गंभीरता को ध्यान में रखते हुए निर्धारित हो।
(2) संपूर्ण, औडुव एवं षाडवत्व के अनुसार पूर्ण निर्वाह हो।
(3) न्यास उपन्यास के स्वरो पर सम आदि का निर्धारण । अल्परण । अल्पत्व बहुत्व के स्वरों का विशेष ध्यान।
(4) राग के गायन के समय के अनुरूप बंदिश की विषय वस्तु हो।
(5) विशेष ऋतु में प्रयोज्य रागों की वंदिशो में उस ऋतु विशेष का वर्णन हो।
(6) पूर्वांग उत्तरांग के नियमों अनुसार बंदिश में स्वर चयन हो।
(7) राग में निहित रस का बंदिश में निर्वाह हो।
(8) गायन शैली एवं ताल के अनुसार शब्द चयन अर्थात बिलंवित ख्याल में अधिक शब्दों वाली बंदिश हो जिससे अति विलंबित गायन में भी शब्द पर्याप्त दूरी पर हो।
(9) समकालीन विषयों का समावेश हो।
(10) प्रत्येक आयु वर्ग एवं स्त्री पुरूष द्वारा सहज एवं निःसंकोच रूप में गेय हो।
(11) बंदिश में विषय वस्तु निर्विवाद एवं सर्वमान्य हो। जाति, धर्म, संप्रदाय एवं देश आदि के विरूद्ध विचार प्रस्तुत न किये जाएं।
(12) कलात्मकता एवं सरलता/सहजता का अनुपम संगम बंदिश में हो।
(13) स्थाई एवं अंतरा में पंक्तियों की पर्याप्त संख्या ख्याल, ध्रुपद, धमार, तिरवट, चतुरंग आदि के अनुसार पर्याप्त हो।

इन बिन्दुओं के अतिरिक्त विद्वानों एवं वाग्येकारों की योग्यता एवं प्रतिभा के अनुसार विशेष गुणों एवं लक्षणों का समावेश बंदिशों में किया जाता है।

मध्यकाल से अब तक कई कारको ने बंदिशों के स्वरूप को प्रभावित किया। कई तत्व सकारात्मक एवं कई नकारात्मक गुणों से युक्त होने के कारण बंदिशों की रचना की प्रक्रिया में सम्मिलित रहकर उसे प्रभावित करते रहे परंतु इन सम–विषम पारिस्थितियों के बाद भी कुछ राग एवं उनकी बंदिशें अपने मूल चलन से नही बदली जो उचित है या अनुचित यह चर्चा बाद में की जा सकती है परंतु ऐसे ही एक राग हंसध्वनि की बंदिशों का विश्लेषण अत्यंत आवश्यक है।

राग का चलन इस प्रकार है :–

सा रे ग सा, ग प ग रे, ग प नि, प नि नि, सां, रें सां, रें गं रें सां, नि, प नि रें सां नि, ग रे ग प नि, नि, रें गं रें सां।[4]

सर्वप्रथम सर्वाधिक लोकप्रिय बंदिश का उल्लेख करना उचित है जो है "लागी लगन पती सखी सन" जिसकी सरगम है गप– प रे – सा सा – प रे – – ग – रे सा। कई बंदिशों में ग रे सा स्वरों से युक्त मुखडा है जो इस राग की पहिचान बन गया है। सिर्फ स्थाई का पूर्वभाग हंसध्वनि निश्चित कर देता हैं एक अन्य बंदिश इसी प्रकार की है जो बड़े ख्याल की है।[5]

3	4	+	0	2	0
ग प रे ग	सा –	प ग रे	सा ग	ग रे	ग –
क ऽ र	म न	हं रि	को ऽ	ध्या ऽ	ऽ न
3	4	+	0	2	0
ग प	नी प	ग –	प रे	सा प	रे सा
रा म	गु न	गा ऽ	ऽ हूं ये	ऽ	ऽ ऽ

इस प्रकार के मुखडे का प्रयोग एक तराने में भी है 6 –

0	3	+	2
ग ऱे ग प –	रे – सा –	प – रे –	ग प रे सा
त ना तोम त	न दे रे ना	त दा ऽ नी	द्री ऽम त ना

अन्य बंदिश इसी प्रकार की है जो प. रामाश्रय झा की हैं 7–

+	2	0	3
ग प	रे – सा	रे –	सा – सा
क र	ना ऽ ट	को ऽ	रा ऽ ग

इस प्रकार ग रे सा अथवा ग रे नि प सा अथवा ग प रे सा अथवा रे सा को हम स्थाई के प्रथम भाग में अवश्य ही पाते है। राग हंसध्वनि औडुव राग होने से अत्यंत प्रभावशाली है और उपरोक्त स्वर समूहों के अतिरिक्त नि प ग सां नि प ग या रें नि प ग रे स्वर समूह भी राग वाचक है सा वादी मानने वाले सा पा सम उचित मानते है अतः इस कारण भी ग रे सा या ग प रे सा से मुखड़ा प्रारंभ होता है। गंधार वादी मानने वाले विद्वान ग से बंदिश प्रारंभ करना उचित मानते है। अभी तक प्रचलित बंदिशों में एक वर्ग समूह उपरोक्त वर्णित समूह से है ऐसा नहीं है कि अन्य प्रकार की बंदिशें पूर्व में उपलब्ध नहीं थी। एक बंदिश पं. भातखंडे जी ने बनाई।

0	3	+	2
सा – ग रे	ग – ग ग	सां नि प प	रे ग – –
शं ऽ क रा	भू ऽ ष न	मे ऽ ल नि	ला ऽ ऽ यं

0	3	+	2
सा रे ग रे	सा रे नि सा	नि प नि नि	सा – – सा
गु णि ज न	हृं ऽ सं ध्य	नि को स म	झा ऽ ऽ य

यह सैद्धांतिक रूप में कही हंसध्वनि के नियमों का उल्लंघन नही करती परन्तु बिरले ही कभी यह लक्षण गीत सुनने में आता है।

गत पाँच दशकों से पूर्व के वरिष्ठ कलाकारों में हंसध्वनि लोकप्रिय नहीं था इसका कारण क्या है , जानने का प्रयास करने पर कुछ तथ्य सामने आते है। प्रथम बिन्दु यह कि उत्तर भारतीय संगीतज्ञ इसे दक्षिणी राग मानकर उत्तर भारतीय शैली से गायन हेतु उपयुक्त नहीं मानते हों यह संभव है।

द्वितीय कारण यह हो सकता है उस समय उपलब्ध बंदिशें एक ही प्रकार की होने के कारण गायकों में अरूचि का भाव आ गया हो।

तृतीय कारण यह भी संभव है कि गुरू शिष्य परंपरा में यह पहले से समाविष्ठ नहीं था अतः इसे घराने के नियमों के बाहर समझा जाता हो।

इनके अतिरिक्त यह भी कहा जा सकता है कि सामान्य चलन में न होना एवं किसी विशेष कारण का अभाव ही हंसध्वनि की अलोकप्रियता के पीछे कारण हो।

हंसध्वनि की बंदिशों में समानता भी इसकी अलोकप्रियता के कारण ही रही होगी जब कोई इसका प्रदर्शन ही नही करना चाहेगा तो वाग्येकार बंदिशें क्यों बनाएगा, परंतु आज स्थिति भिन्न हैं आधुनिक गायक जहाँ नए रागों को सीख रहे है और सिखा भी रहे है प्रदर्शन में विशिष्टता एवं अनोखापन लाने के लिए अप्रचलित रागों का गायन किया जाता है जिससे नई प्रकार की बंदिशों का सृजन हुआ है और हंसध्वनि में भी हो रहा है। मैंने कुछ बंदिशें अपने गुरू से सीखी है जो हंसध्वनि के रूप के नये ढंग से सजाती है। इनमें ग रे सा के अपेक्षा नि प ग सा रे ऩि प का मुखड़े में प्रयोग किया गया है।[9]

0	3	+	2
नि – – प	प ग – सा	रे – – प	प – सा –
आ ऽ ऽ ज	ऽ घ ऽ ये	आ ऽ ऽ ये	ऽ प्रि या ऽ
नि प स नि	रे – सा –	प – ग प	नि प ग प
अं ग अं ग	फ र क त	हु ल सा ऽ	यें ज़ा या ऽ

इसी प्रकार बड़ा ख्याल भी निषाद से प्रारंभ होता है–

3	4	+	0	2	0
नि प	गरे निप	सा –	सा सारे	ग गप	रे –
आ ऽ	ऽऽ दिन	सा ऽ	ऽ ऽऽ	नी ऽऽ	ऽ इ

एक अन्य बंदिश शडज से प्रारंभ होती है –

3	4	+	0	2	0
सा –	सा रे	रे –	नि प	प सा	सा –
ज वि	तु चं	ऽ द्र	मा ऽ	सु हा	ऽ त

पहले एक एक राग की कई कई बंदिशे गायको को याद रहती थी जिससे उन रागों का स्वरूप हमेशा स्पष्ट बना रहता था भिन्न भिन्न बंदिशे राग वाचक भिन्न भिन्न स्वर समुदाय को अपने में समाये रखती थी। आधुनिक गायक भी अधिक बंदिशों के महत्व को समझ रहे और सीखने का प्रयास कर रहे है।

आधुनिक वाग्येकारों का यह दायित्व है कि भारतीय संगीत की बंदिशों की समृद्ध परंपरा को और समृद्ध करे। नई बंदिशों का सृजन करे जिसमें राग की शुद्धता, काव्य की गरिमा एवं लय ताल का वैचित्य हो। ख्याल के अतिरिक्त धुपद, धमार, तिरवट, चतुरंग, तराना आदि की बंदिशों का भी निर्माण किया जाना चाहिए। तीनताल इकताल, झपताल के अतिरिक्त अन्य तालों में बंदिशों की संख्या अत्यंत अल्प है जिसे बढ़ाया जाना चाहिए। अन्य भारतीय भाषाओं में बंदिशों को सृजन उचित है। विद्यार्थियों को सरल बंदिशें सीखने में सरलता होती है अतः विशेष रूप सरल बंदिशों का निर्माण किया जा रहा है और प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। नई बंदिशों के प्रचार में सर्वाधिक योगदान शिक्षकों का होता है उन्हें नई बंदिशों के सीखकर विद्यार्थियो को सिखाना चाहिए जिससे वे परंपरागत बंदिशों के साथ आधुनिक रचनांए भी सीख सकें। बंदिश निर्माण के क्षेत्र में हो रहे व्यक्तिगत प्रयासों को प्रोत्साहित कर हम सभी भारतीय संगीत परंपरा को समृद्ध करने में अपना योगदान सुनिश्चित कर सकते है।

संदर्भ सूचि

1.क्रमिक पुस्तक मालिका – पं. विष्णुनारायण भातखंडे (हिन्दी अनुवाद) संपादक लक्ष्मीनारायण गर्ग –1963 – पृष्ठ सं. 255

2.श्रीमल्लक्ष्यसंगीतं (प्रथमावृत्ति) पं. भातखंडे पृष्ठ सं. 74

3.सौन्दर्य, रस एवं संगीत – प्रो. स्वतंत्र शर्मा – अनुभव प्रकाशन 2010 पृष्ठ सं. 62
4.क्रमिक पुस्तक मालिका – पं. विष्णुनारायण भातखंडे (हिन्दी अनुवाद) संपादक लक्ष्मीनारायण गर्ग –1963 – पृष्ठ सं. 255
5.पारंपारिक बिलंवित ख्याल एकताल में निबद्ध
6.पारंपारिक तराना तीनताल में निबद्ध
7.अभिनव गीतांजलि. 4 प. रामाश्रय झा
8. क्रमिक पुस्तक मालिका – पं. विष्णुनारायण भातखंडे (हिन्दी अनुवाद) संपादक लक्ष्मीनारायण गर्ग –1963 – पृष्ठ सं. 256
9.संगीत सुरसरि भाग 3 (प्रकाशधीन) ठा. रामसिंह तोमर संपादन – अवधेश प्रताप सिंह तोमर